बंगाल के पट–चित्र

डा० रीता तिवारी*

लोककला बड़ा ही सहज, सरल और सुन्दर शब्द है। लोककला से तात्पर्य है जनमानस अथवा साधारण जन की कला। लोककला आतंरिक सौन्दर्य का सरलतम रूप है। यह कला सीधे–सादे लोगों की अभिव्यक्ति है जिसमें न कोई शास्त्रीय बंधन होता है और न कोई बनावटीपन। इसके लिए किसी स्कूल अथवा प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह लोक की धरोहर है। पुरातन काल से ही यह पीढ़ी दर पीढ़ी चलती आई है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि लोक कला जन सामान्य, विशेषतया जन समुदाय की सामूहिक अनुभूति की अभिव्यक्ति है।

लोक कला धार्मिक भावनाओं और आध्यामित्क अनुभवों पर विशेष आधारित है। लोक में प्रचलित रीति रिवाजों और विश्वासों से भी यह सम्बन्धित है। यह कला मानव सभ्यता के अभ्युदय के साथ चली है। भारत में लोक कला को जीवित रखने का श्रेय स्त्रियों को जाता है। पुरातन काल से ही साहित्य में ऐसे अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं जिसमें स्त्रियों द्वारा घर आंगन की भित्तियों पर चित्रों को उकेरने का वर्णन मिलता है। यह उसकी सौन्दर्यनुभूति एवं उसके घर आंगन की मांगलिक अभिलाषा पारम्परिक सुख समृद्धि के प्रतिक के रूप में बनती चली आई है। लोक कलाकार बिना किसी स्वार्थ के स्वान्तः सुखाय साधना करता है।

भारत में बंगाल का एक विशिष्ट स्थान रहा है। अध्यात्म अथवा समाज सुधार की बात हो या फिर साहित्य, संगीत और कला की, सभी क्षेत्रों में बंगाल सदैव अग्रणी रहा है। बंगाला की लोककला परम्परा भी अति प्राचीन और समृद्ध है। 8वीं शताब्दी से 10वीं शताब्दी में पाल राज्य काल से आरम्भ होकर 14वीं शताब्दी तक यह कला पूर्ण उन्नति को प्राप्त हुई। यद्यपि इस कला का कोई लिखित ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है लेकिन यह व्यवहारिक जीवन में महत्व रखती हुई एक के बाद दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होती रहती है। सामूहिक रूप से चलने वाली इस कला में परिवर्तन बहुत धीरे–धीरे होता है।

भारतीय लोककला की परम्परा में बंगाल का स्थान सर्वोपरि है। बंगाल में प्रत्येक शुभकार्य एवं तीज त्यौहार के अवसर पर किसी न किसी रूप में हमें लोककला के दर्शन होते हैं। बिना किसी बनावट, के सहज, सरल रूप में अपने भावों को व्यक्त करना ही इन कलाकारों की शैली है इन कलाकारों के लिये कोई बंधन मान्य नहीं है। भारत में सर्वप्रथम अजीत घोष के लेखों द्वारा बंगाल की लोक कला की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ। ये लोक चित्र शीट अथवा स्क्राल पर बनाये हुये थे। स्क्राल के उत्कृष्ट उदाहरण कालीघाट से प्राप्त हुए।

बंगाल की विस्तृत लोक कला को मुख्यतः निम्न भागों में विभाजित किया सकता है।

* एम.के.पी. डिग्री कॉलेज, देहरादून।

1. पट
2. अल्पना
3. कांथा
4. मिट्टी के पात्र एंव खिलौने आदि।

यहाँ हम बंगाल की पट कला का ही अध्ययन करेंगे।

पट – बंगाल की लोककाल में पट का विशेष स्थान है। साधारणतया पट का तात्पर्य चित्र से है। पट शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत और पालि के 'पट्ट' शब्द से हुई है। इस शब्द के दो अर्थ हैं–सुन्दर वस्त्र, वस्त्र के ऊपर अंकित कोई चित्र। संस्कृत साहित्य में इस शब्द को बाद वाले अर्थ में प्रस्तुत किया गया है। पट चित्रित करने वाले शिल्पी पटुआ कला ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय राष्ट्रीय कला का प्राचीनतम स्कूल है और यह निश्चित रूप से बौद्धकाल और अजंता की कला से पहले का है।

सर्वप्रथम पट चित्रों के अन्तर्गत देवी–देवताओं के चित्र बनते थे। इन चित्रों का प्रयोग पूजा हेतु किया जाता था। यह प्रथा बंगाल के सुदूर जिलों में आज भी मिलती है। इस प्रकार पट चित्र की शुरूआत धार्मिक रूप में हुई। बंगाल के पट सबसे पुराने उदाहरण हैं जो आज भी विद्यमान हैं। पट चित्रों की भाषा सरल, सीधी और आडम्बरहीन थी, रेखा पुष्ट थी, वस्तु का स्वरूप सार–संक्षिप्त तथा गत्यात्मक होता था। कथा का चित्रण इस भांति किया जाता था कि आम आदमी उसे समय सके। पटुओं के काम करने का तरीका बहुत ही स्वाभविक था। पटुआ वास्तव की हूबहू नकल नहीं करते थे। केवल उसका सार ही चित्रित करते थे। विषय–वस्तु की दृष्टि से पट को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. पौराणिक चित्र
2. ऐतिहसिक चित्र
3. कथा चित्र
4. सामाजिक चित्र
5. पशु पक्षी

बंगाल के पट को असित कुमार हाल्दर ने दो वर्गों में विभाजित करते हुए लिखा है, ''एक प्रकार के तो वे चित्र हुआ करते थे जो केवल मेलों में बिकने के लिये बनाये जाते थे और दो–दो पैसों में बिकते थे। दूसरे प्रकार के चित्र बड़े आकार के और जड़े हुए होते थे। और वे ऐसे क्रम से अंकित किये जाते थे कि रामायण, पुराण तथा कृष्ण लीला की घटनाओं का क्रमबद्ध वर्णन आ जाये। चित्रकार घर–घर घूमकर इन चित्रों का प्रदर्शन करते तथा गा–गाकर इनमें प्रदर्शित की गई घटनाओं का वर्णन करते। इस प्रकार वे धन का उपार्जन किया करते थे। वर्तमान में सिनेमा के चित्रों का पट था। पट के चित्रों में श्री कृष्ण लीला, गौर निताई का संकीर्तन, दशावतार तथा तांत्रिक देवी–देवताओं के स्वरूप चित्रकार अंकित किया थे।'' प्रथम प्रकार के चित्र कम पैसों में बेचे जाने के कारण कागज पर बनाये जाते थे। उनका विषय या तो सामाजिक होता था या व्यंग्यात्मक अभाव धार्मिक। दृष्टव्य चित्र संख्या 1, 2।

चित्र 1: कृष्ण लीला पट

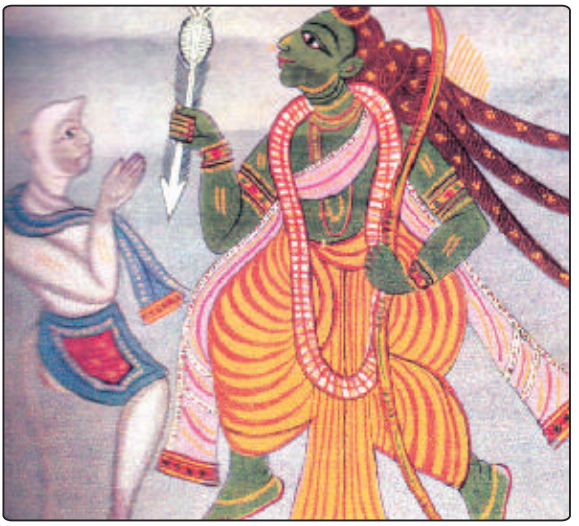

चित्र 2: राम और हनुमान

ये अशिक्षित चितेरे अजंता, बाघ गुहा आदि के चित्रकारों के समान चित्र में विचित्र विषयवस्तु का निर्वाचन नहीं कर पाते थे। वे सब लकीर के फकीर होकर अभ्यास के आधार पर वंश परत्परा से सीखे गये चित्र ही अंकित करते जाते थे। उनमें प्राचीन रीति पद्धति तो रह गई थी किन्तु चित्रकार की कल्पनाशक्ति की कोई भी उत्कृष्टता देखने में न आई। भाव और कल्पना के विषय में चित्रकार पंगु हो गया। पट बाजार में बिक्री करने की वस्तु भर रह गये। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक बंगाल का पट चित्र क्षीण अवस्था में पहुँच चुका था। पट चित्र के लिए कलाकार को चित्रण का जो ज्ञान होना चाहिए, वह चित्रकारों में नहीं था।

जब निम्न वर्गों के अतिरिक्त अन्य वर्गों में इन चित्रों की मांग बढ़ने लगी तो लकड़ी के ब्लाक से इन चित्रों की छपाई (वुड कट्स) का प्रचलन हुआ। चित्रों के कोई प्रिन्ट निकालकर उनमें लाल, हरे नीले रंगों का प्रयोग होने लगा। इन चित्रों का कागज अखबार की तरह पतला होने के कारण इन पर प्रयुक्त रंग फैले हुए लगते हैं, साथ ही ये रंग बड़ी असावधानी से जल्दी–जल्दी लगाये गये प्रतीत होते हैं। कम्पनी स्कूल के चित्रों का प्रचलन बढ़ने के साथ–साथ इन कलाकरों की शेली में पर्याप्त परिवर्तन आया। यथार्थवादी शैली के अनुकरण में इन कलाकारों ने भी पारदर्शी अथवा तैल रंगों को घिसकर चित्रों में प्रयोग किया।

दूसरे प्रकार के चित्र 'स्क्राल' के रूप में प्रायः धार्मिक विषयों रामायण या कृष्णलीला आदि को कोई दृश्यों में विभाजित करके बनाये गये। ये चित्र कागज और कपड़े पर बने हैं। कागज पर बने चित्रों के पीछे मजबूती के लिये कपड़े की पट्टियां लगाई गई। दोनों प्रकार के स्क्राल लकड़ी के गोल बेलन पर लपेट कर रखे जाते, जिन्हें दिखाते समय पटुआ लोग धीरे–धीरे एक के बाद दूसरा दृश्य खोलते जाते और विषय को कण्ठस्थ की गई कविता की भांति गाकर सुनाते। इन स्क्राल चित्रों की लम्बाई प्रायः 20 से 25 फीट और चौड़ाई दो फीट हुआ करती थी तथा इनमें प्रायः 12 से 15 कहनियों के दृश्यों का अंकल होता था। इन चित्रों

चित्र 3: स्क्रॉल चित्र रामायण

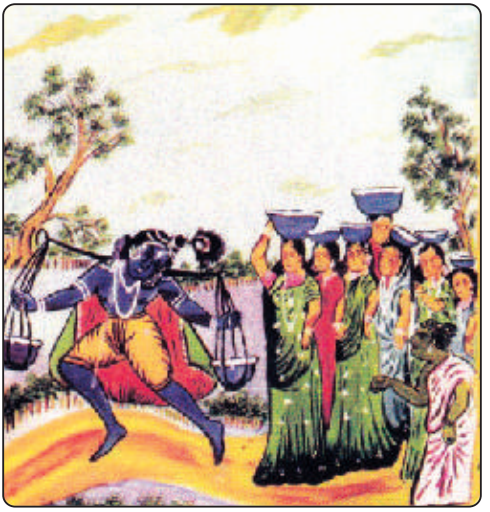

चित्र 4: कृष्ण और गोपियां

को देखते हुए ग्रामीण उतना ही आनन्द लेते थे। जितना आनन्द आजकल चल–चित्रों को देखने में मिलता है। दृष्टव्य चित्र संख्या 3, 4।

डा० निहार रंजन राय का तम है कि 'स्क्राल चित्रों के मूल में गहरा जादुई प्रभाव होता था। इसका प्रमाण इस आधार पर है कि जहां संथाल लोग मुख्यतः बसते थे, वहां पटुआ या 'स्क्राल चित्रकारों की एक श्रेणी 'जादु पटुआ' के रूप में जानी जाती थी। इन चित्रों के माध्यम से पटुआ सामान्य लोगों में डर की भावना उत्पन्न करते थे, जिसका उदाहरण 'यमपट' के चित्र हैं। पट के इन सभी उदाहरणों में रेखाओं और जल रंग के 'वाश का विशेष महत्व है। बकरी या गिलहरी के बालों की कूंची से कुशलता पुर्वक खींची गई रेखाओं में एक विशेष गति दिखायी देती हैं। चित्र के आधार पर महीन मिट्टी और गोबर की पर्त लगाकर फिर खड़िया या चूने की पर्त चढ़ाई गई है। उसके बाद स्वयं तैयार किये गोंद और चिकाई के लिये बेल का गोंद मिलाया गया है।

चित्र बनाने की शेली पीढ़ी दर पीढ़ी चलने के कारण ये चित्र आपस में एक दूसरे से साम्य रखते हैं और सबमें एक सी विशेषताएं हैं। चटकीले रंग, लयपूर्ण बाह्य रेखाएं, अन्तराल पूर्णतः भरा होना–ये चित्रों की साधारण विशेषताएं हैं। दृष्टव्य चित्र संख्या 2, 4। स्क्राल चित्र आज बहुत बड़ी संख्या में उपलब्ध नहीं हैं, परन्तु मिदनापुर, हुगली, वर्धमान, बांकुडा, मुर्शिदाबाद, वीरभूम आदि स्थानों से प्राप्त स्क्राल एक दूसरे से सम्बन्धित प्रतीत होते हैं।

समय बदलने के साथ–साथ पटुआ कला में भी परिवर्तन आया। बंगाल के सुप्रसिद्ध लोक कलाकार यामिनी राय का कहना है '' असली पटुआ अंग्रजों के आगमन से बहुत पहले प्रचलित थे, जबकि कलकत्ता शहर भी नहीं बना था उनमें तब असली जान थी। परन्तु आज के पटुआ चित्रकार अज्ञानी हैं। सभ्यता में प्रगति होने पर शिल्पी बाहरी चमत्कारिक रूप की ओर झुककर उसे परिष्कृत रूप देने की ओर बढ़े, जिससे उनकी कला में कोई त्रुटि न रह जाये इसी में उनके चित्रों की उसली जान चली गई। ये निमान्त सत्य है कि वैज्ञानिक उन्नति और आधुनिक सभ्यता ने इस कला को निष्क्रिय होने के लिये बाध्य किया।''

पटुआ शिल्प और कालीघाट चित्रों को बहुत से आलोचकों ने एक ही श्रेणी में रखा है। दोनों में समीपता होते हुए भी दोनों स्वतंत्र हैं। कालीघाट वस्तुतः अन्य केन्द्रों की भांति एक मुख्य केन्द्र था। जहां पर व्यवसायी कलाकरों ने अनेक संख्या में चित्र बनाये। कालीघाट मन्दिर की धार्मिक मान्यता के कारण सालभर यहां यात्रियों का आवगमन बना रहता था। इसी मंदिर की सीढ़ियों पर बैठकर पटुबा चित्रकर विभिन्न देवी–देवतओं, पशुओं एवं सामाजिक विषयों को चित्रित किया करते थे। पटुआ चित्रकार विभिन्न देवी–देवताओं, पशुओं एवं सामाजिक विषयों को चित्रित किया करते थे। पटुआ परिवार का प्रत्येक व्यक्ति यहां तक कि स्त्रियां भी इा शिल्प में योगदान देती और इनका परिवार मन्दिर के पास ही स्थयी रूप से निवास करता था। काली घाट आकर इन गरीब पटुओं को एक ऐसा स्थान मिल गया जहाँ वे चित्र बनाकर अपनी रोजी–रोटी का इंतजाम कर सके, अपने परिवार का पालन–पोषण कर सके।

इन कालीघाट चित्रों का उद्‌गम 'स्क्राल' चित्रों से हुआ था, परन्तु स्क्राल चित्रों में जहां बड़े धैर्य और लगन से चित्रकारी की जाती थी, वहाँ कालीघाट लघु चित्रों में उतना समय नहीं लगाया जाता था। वैसे कालीघाट लघु चित्रों में कल्पना की कोई कमी नहीं थी। इनकी विषय–वस्तु अत्सन्त विस्तृत थी जिनके विभिन्न वर्ग इस प्रकार थेः–

1. पौराणिक (दृष्टव्य चित्र संख्या 5)
2. ऐतिहसिक
3. व्यंग्यात्मक (दृष्टव्य चित्र संख्या 6)
4. दैनिक जीवन से सम्बन्धित (दृष्टव्य चित्र संख्या 7)
5. प्रकृति और वस्तु चित्रण (दृष्टव्य चित्र संख्या 8)

चित्र 5ः कृष्ण काली

चित्र 6ः बाबू को खींचती पत्नी

चित्र 7: मछली काटती स्त्री

चित्र 8: सिंह

पटुआ पहले स्वंय रेखांकन करते थे और उसके बाद अपने सहयोगियों द्वारा रंग भरवाते थे और ये रंग प्रायः रेखांकन से बाहर निकल जाते थे। यद्यपि इन्होंने अपनी पुरानी रीति में कार्य करने का प्रयास किया किन्तु इन पर कुछ हद तक 'कम्पनी शैली' का प्रभाव आ गया दृष्टव्य चित्र संख्या 6। इसका मुख्य कारण सामाजिक रूचि और तत्कालीन शिक्षा थी। इन चित्रों में महीन काम नही किया जाता था। चित्रों की बाह्य रेखा पत्ली और सशक्त होती थी। शैली की दृष्टि से कालीघाट पट के तीन प्रकार उपलब्ध हैं–

1. रेख चित्र
2. काले रंग के विभन्न तानों से बने चित्र
3. टेम्परा रंग के पारदर्शी प्रयोग से बने चित्र

इन चित्रों की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ने के कारण पटुआ इस प्रकार के चित्र बनाने लगे क्योंकि इन रेखा चित्रों में समय कम लगता था। यह रेखा पेंसिल के ऊपर तूलिका द्वारा काले अथवा भूरे रेग में बनाये जाते थे। सामान्यतः इनका आकार 45 x 27 से.मी. होता था। अधिकांश चित्रों की रेखायें बहुत सुंदर, सशक्त और लयपूर्ण हैं। इनमें से 16 अति उत्तम रेखा चित्र नन्दन म्यूजियम, कला भवन के संग्रहालय में है जो कि सुप्रसिद्ध पटुआ चित्रकार निवारन चन्द्र घोष द्वारा बनाये गये हैं।

छापा तकनीक के आने से कालीघाट चित्रों की मांग कम होती गई। कुछ चित्रकार कालीघाट को छोड़कर इधर–इधर चले गये। सुप्रसिद्ध चित्रकार काली चरण और निबारन

चन्द्र घोष की मृत्यु के साथ ही पटुआ कला भी विलुप्त हो गई। कालीघाट चित्रकारों में नीलमणि दास, बलराम दास, गोपाल दास, निबारन चन्द्र घोष एवं कानी चन्द्र घोष के नाम सुप्रसिद्ध हैं। रजनीकांत चित्रकार, सिरीष चन्द्र चित्रकार और रामानंद चित्रकार काफी समय तक कालीघाट शैली में कार्य करते रहे।

इन प्रकार हम देखते हैं कि बंगाल की पट चित्रकला अज्यन्त प्राचीन है। समय बदलने के साथ–साथ पटचित्रों के स्वरूप में कुछ बदलाव आया। इस कला के अनेक उदाहरण आज भी बंगाल के गांवों में देखे जा सकते हैं। पट चित्रकला का बंगाल की लोक कला में निश्चित रूप से महत्वपूर्ण स्थान है। पटुआ कलाकारों ने पौराणिक, सामाजिक, व्यंग्यात्मक आदि सभी विषयों को जिस खूबसूरती एवं लयपुर्ण रेखओं के साथ चित्रित किया है वह सभी को प्रभावित करता है। कालीघाट के रेखाकंन से प्रभावित होकर यामिनी राय जैसे महान कलाकर सामने आये जिनके चित्र आज भी सभी का मन मोह लेते हैं। सरकार द्वारा इस पारम्परिक लोक कला को पुनः जीवित करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ सूचीः

1. Jaya Appaswamy, "Folk art is communnal and a result of what may be called cumulative experience and cumulative originality ". Abanindra Nath Tagore and the Art of his time, The Crtical Vision, Lalit Kala Academy, New Delhi, 1968, Pg. 45.
2. Bishnu Dey and John Erwin 'The Folk Art of Bengal', Marg Vol. 1, No. 4, Pg. 45.
3. Ajit Ghosh, 'Old Bengal Paintings, ' Rupam, Nos. 27-28 July, Oct. 1926, Pg.98.
4. Prodyot Ghosh, " The Bengal World Pat means in general 'Picture'. In Particular, it means a picture painted on cloth. The word pat is derived from the sanskrit and pali word PATTA which means "Cloth". Kalighat Pata, Annals and Appraisals, Pg. 8.
5. Ajit Ghosh, "This word should be prononuced like the English word 'Pot. In this Sense the word occurs in the Mahabharat, Katyayan Sutra etc.
6. G.S. Dutt, "Historically the art of the Bengal Patuas as depicted in these pats represents, I venture to think, the oldest school of the national art of India. They appear to me undoubtedly to belong to the pre-Budhistic and Pre Ajanta School of art..... ."

   kalighat Drawing, London, Victoria and Albert Museum, Pg. 7

   * व्यक्तिगत रूप से गुरू सदय दत्त म्युजियम, कलकत्ता में ऐसे पट देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।
7. असित कुमार हाल्दार, 'बंगाल का पट चित्र' समकालीन कला, ललित कला अकादमी की पत्रिका, मई 1984, संख्या 4, पृष्ठ 54।
8. Nihar Ranjan Ray, "It is through such songs and pictures that the cultural traditional of the people as whole was transmitted down to the ages of our own time. "

   The arts and Crafts of India and Pakistan Pg. 16.
9. वासुदेव शरण अग्रवाल, तीन कलाकारों से भेंट, आजकल 1951 ।,
10. अशोक मित्र, भारतेर चित्रकला।
11. Jayant Chakrabarti, Kalighat Paintings, Nandan, Kala Bhawan, Shanti Niketan, Pg. 4.